REVIEW OF RESEARCH

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 3.8014(UIF)
VOLUME - 6 | ISSUE - 4 | JANUARY – 2017

मीराबाई की भाषा के विविध पक्ष : एक विश्लेषण

प्रा.डॉ. मिरगणे अनुराधा जनार्धन
हिन्दी विभाग अध्यक्षा , आदर्श महाविद्यालय उमरगा.

मीराबाई भक्त पहले हैं, इसलिए काव्य-रचना उनका लक्ष्य नहीं है। काव्य उनके लिए साधन है तथा भक्ति साध्य है। मीरा के काव्य का भाव-पक्ष अत्यन्त समृद्ध है। उनके भावों को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाला उनके काव्य का कला-पक्ष भी उतना ही उन्नत एवं विकसित है। उनकी भाषा में सर्वत्रा एकरूपता नहीं है। उन्होनें कहीं राजस्थानी भाषा का प्रयोग किया है तो कहीं ब्रज और गुजराती भाषाओं का प्रयोग किया है। इसी प्रकार ब्रज और राजस्थानी भाषाआं के मुहावरों एवं लोकोक्तियों का सार्थक एवं सटीक प्रयोग किया है जिससे भाषा में ताजगी एवं अर्थाभिव्यक्ति मे चमत्कार उत्पन्न हुआ है। इनके काव्य में जितने भी अलंकारों का प्रयोग हुआ है वह सहज एवं स्वाभाविक ही हुआ है। अतः हम कह सकते हैं कि मीरा ने अनेक भाषाओं का प्रयोग अपने काव्य में किया है।

मीरा काव्य में इतने अधिक प्रक्षिप्ताश जुड़ गये हैं कि मीरा से सम्बन्धित किसी भी पहलू पर निश्चयात्मक शब्दों में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। यही समस्या मीरा की भाषा के विषय में भी है। मीरा के पद अनेक भारतीय भाषाओं में प्राप्त होते हैं, जिनमें से मुख्य हैं- राजस्थानी, ब्रज और गुजराती कुछ पद पंजाबी भाषा में मिलते हैं। यथा-

राजस्थानी भाषा का प्रयोग

झांझरिया जग जीवन केरा, कृष्ण जी कड़ला ने कांवी रे।
बीघिंया घूँघरा रामनारायण ना अजावट अन्तरजामी रे।

ब्रजभाषा का प्रयोग

मन की मैल हियतें न छूटी दिया तिलक सिर धेय।
काम कूकर लोभ डोरी, बांधि मोंहि चण्डाल।

गुजराती भाषा का प्रयोग

प्रेमनी प्रेमनी प्रेमनी रे, मने लागी कटारी प्रेमनी रे।
जल जमुनामां भरवां गयांता हती नागर माथे हेमनी रे।।

पंजाबी भाषा का प्रयोग

लागी सोही जाणै, कठण लगण दी पीर।
विपल पड्यां कोइ निकटि न आवै, सुख में सबको सीर।।

मीरा के जीवनवृत से ज्ञात होता है कि ये कुछ दिनों तक गुजरात में रही थीं, ब्रज में उन्होंनें पाँच-छः वर्ष व्यक्तीत किए थे और राजस्थान में तो इनका जन्म ही हुआ था। संभवतः कुछ काल तक ये पंजाब में भी रही हों अतः मीरा की एक निश्चित भाषा कौन सी है, यह बताना तब तक कठिन है, जब तक मीरा के पदों का कोई सर्वमान्य प्रमाणित संग्रह तैयार नहीं हो जाता।[1]

मीरा-पदावली के भाषा-रूप को लेकर, विद्वानों में बड़ा मत-भेद है। इस मतभेद का मूल कारण है मीरा पदावली के प्रमाणिक पाठ के विषय में निर्णय न हो पाना! दूसरे शब्दों में मीरा की भाषा का प्रश्न वस्तुतः मीरा-पदावली के पाठालोचन के साथ जुड़ा हुआ है एवं जब तक मीरा पदावली के प्रमाणिक पाठ की समस्या हल नहीं हो जाती, तब तक मीरा की भाषा का प्रश्न अर्निइत ही बना रहेगा। इसका यह तात्पर्य नहीं कि मीरा कि प्रकाशित पदावलियों में कोई भी प्रमाणिक नही है, वरन् यह कि मीरा की पदावली के जो विभिन्न संग्रह अब तक निकल चुके हैं, उनमें भाषागत एकरूपता नहीं है और तो और, श्री परशुराम चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित उसके परवर्ती संस्करण में ही रात-दिन का अन्तर है। इसी भाँति पद्मावती शबनम द्वारा सम्पादित 'मीरा बृहत् पद संग्रह' में संकलित पदों में ब्रज, राजस्थानी और गुजराती भाषा के पदों में अतिरिक्त पंजाबी व अनेक मिश्रित भाषाओं के भी पद हैं। यही हाल अन्य पदावलियों का है।

समस्या तब और भी जटिल हो जाती है जब इनमें अनेक पद थोड़े बहुत रुपान्तर के साथ सभी भाषाओं में मिल जाते है। ऐसी स्थिति में मिरा-पदावली का कौन सा पाठ प्रामाणिक माना जाए? यही नहीं गुजराती भाषा में भी मीरा की पदावली के अनेक संकलन निकल चुके हैं एवं गुजराती भाषी- जन मीरा पर अपना उतना ही अधिकार समझते हैं, जितना राजस्थानवासी और उनका यह समझना अकारण नहीं है। फिर भी ब्रज-भाषी जन भी अपने दावे में किसी से पीछे रहने वाले नहीं हैं। इस भाषागत अनैश्चित्य से छुटकारा पाने के लिए कुछ विद्वानों ने यह सरल निष्कर्ष निकाल लिया कि मीरा की वाणी त्रिवेणी के समान ब्रज, राजस्थानी व गुजराती इन तीनों ही धराओं में बही। मीरा-पदावली के पाठ-ग्रहण के विषय में अपने आधारभूत सिद्धान्त का निरूपण करते हुए डॉ. श्री कृष्णलाल लिखत हैं-

"आज मीरा के नाम से सैकड़ों पद मिलते हैं वे सभी उस मधुर भाव की प्रतिमा मीरा की रचनाएँ नहीं हैं, वरन् मीरा की भक्ति-भावना के प्रति श्रद्धा रखने वाले एक समुदाय की रचनाएं हैं जिनमें मीरा प्रतीक रूप में विद्यमा न हैं। अतः वैज्ञानिक दृष्टि से मीरा के नाम से प्रसिद्ध अधिकांश पद अप्रामाणिक अवश्य हैं, परन्तु भावना की दृष्टि से उन सभी पदों को मीरा की रचना मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए क्योंकि प्रतीक रूप से वे मीरा की ही रचनाएँ हैं, केवल शब्द रचना मीरा की नहीं है।"

जिन्होंने प्रान्तीय भावनाओं से उपर उठकर तत्कालीन भाषा स्थिति को ध्यान में रखते हुए तटस्थ बुद्धि एवं विशुद्ध भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मीरा-पदावली का विवेचन परीक्षण किया है तथा उसके आधार पर यह निर्णय दिया है कि मीरा के पद गुजराती भाषा में उपलब्ध होने पर भी वस्तुतः मीरा की मूल पद रचना की भाषा तत्कालीन मारवाड़ी या पश्चिमी राजस्थानी ही थी, जो कि मीरा की मातृभाषा थी। अतः हमारी यह सुनिश्चित धारणा है कि मीरा ने अपनी मूल काव्य रचना अपनी मातृभाषा अर्थात बोलचाल की मारवाड़ी या तत्कालीन लोकभाषा में ही की थी जिसे हम मध्यकालीन राजस्थानी या पश्चिमी राजस्थानी की संज्ञा भी दे सकते हैं।

मूल मीरा पदावली की भाषा वहीं है इस सम्बन्ध में हमें यह स्मरण रखना होगा कि मिरा के पद अपनी उत्कृष्ट प्रेमानुभूति एवं सरल व निश्छल भावाभिव्यंजना के कारण जन-जन के कंठहार बन गये थे। यही कारण है कि घूमते-फिरते फक्कड़ साधुओं और भक्त-मण्डलियों ने उन्हें गा-गा कर देश के विविध प्रान्तों में पहुँचा दिया, जहाँ वे वहाँ की प्रान्तीय भाषाओं में ढल-ढल कर अपना मूल स्वरूप छोड़ बैठीं। हमारी समझ में मीरा के पदों का गुजराती, बंगला, पंजाबी, ब्रज आदि विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं में उपलब्ध होना ही इसी तथ्य का सूचक है।[2]

मीरा पदावली में रसात्मकता का सागर लहराता है। श्रृगांर और अद्भुत रस के ही उाहरण इनके पदों में मिलते हैं। भावेदय, भावशान्ति, आदि भेदों के उदाहरण भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हैं।

अलंकारों में मीराबाई ने उपमा और रूपक अलंकार का बहुत प्रयोग किया है। उपमानों में पाना (पान) का प्रयोग बहुत किया है। उत्प्रेक्षा की छटा भी यत्र-तत्र दृष्टिगत होती है। कहीं-कहीं असंगति एवं विरोधाभाष जैसे अलंकार भी प्रयुक्त किए हैं। असंगति का उदाहरण पठनीय है-

डारि गयो मनमोहन पासी।

आँवाँ की डालि कोइल इक बोले मेरो मरण अरू जग केरी हाँसी, विरोधाभास की छटा इस पद में दर्शनीय है:-

प्रभुजी कहां गया नेहड़ा लगाय।
छोड्या महा विस्वास संघाती प्रेमरी बाती जलाय।
विरह समंद में छोड़ गया छो, नेहरी नाव चलाय
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे ये विण रहयाँ ना जाय।

प्रधानतः मीरा का काव्य अमिध प्रधान है। लक्षणा और व्यंजना तो कदाचित की दृष्टि में आये। वस्तुतः अभिघात्मक काव्य भी उत्तम हो सकता है क्योंकि मीरा के पद इस तथ्य के साक्षात प्रमाण हैं। लक्षण और व्यंजना की आवश्यकता मीरा के जीवन में कहाँ थी। तब काव्य में ही कहां आ सकती थी। इन पदों में भाषा-सौष्ठव भी अपने ढंग का निराला है। राजस्थानी तथा ब्रजभाषा के अतिरिक्त गुजराती, बंगला, पंजाबी एवं फ़ारसी आदि भाषाओं के शब्द भी इन पदों में प्राप्त हैं। ये कालान्तर में मीरा के पदों के अन्य गायकों द्वारा प्रवेशित भी हो सकते हैं। परन्तु यहां की मूल भाषा में राजस्थानी की उच्चारण क्षमता और व्यावहारिकता तथा ब्रजभाषा का गोयात्मक माधुर्य है। इसलिए गीतिकाव्य के पदलालित्य, संगीतात्मकता आदि गुण इन पदों में सहजता से आ गये हैं।[3]

मीरा की कविताओं का सौंदर्य विशिष्ट ध्वनि योजना में भी है। उनकी पक्तियां राजस्थानी की ध्वनि प्रवृतियों के अनुकूल हैं, इसलिए उनमें प्रवाह है। इस प्रवाह में विशिष्ट ध्वनियों का चमत्कार और झन्कार है। प्रवाह के कारण उन पक्तियों की स्मरणीयता बढ़ती है। स्मरणीयता तब आती है जब पक्तियों की ध्वनि योजना ऐसी हो कि एक ध्वनि से अगली ध्वनि तक जाने में मानी उच्चारण करने में उच्चारण अवयवों को असुविधा न हो। यहीं नहीं, वे उच्चारण में सहज प्रवृत्त हो जाए ऐसा तभी होता है जब रचनाकार, अपनी बोली की अंतरंगता में बैठा होता है, वह बोली की अपनी ध्वनियोजना और वाक्य प्रवाह की ध्वनिगत प्रवृति में खुद रचा-बसा हो।[4]

संदर्भ -

1. मीरा और उनकी पदावली
   (चतुर्थ संशोधित एवं परिवर्तित संस्करण) पृ. 152, 153, प्रो. देशराज सिंह भाटी।
2. मीरा पदावली (शंभुसिंह मनोहर) पृ. 61, 62.
3. मीराबाई की पदावली (ओम् प्रकाश शर्मा शास्त्री) पृ. 23.
4. मीरा का काव्य (विश्वनाथ त्रिपाठी) पृ. 97, 98.